International Journal of Multidisciplinary Research and Development 2014; 1(1): 63-68

International Journal of Multidisciplinary Research and Development

IJMRD 2014; 1(1): 63-68
www.allsubjectjournal.com
Received: 01-05-2014
Accepted: 16-05-2014
ISSN: 2349-4182

सरिता आर्या
सह–आचार्या
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
घरौंडा, (करनाल) हरियाणा।

**Correspondence:**
सरिता आर्या
सह–आचार्या
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
घरौंडा, (करनाल) हरियाणा।

# वैदिक विवाह संस्कार : एक अवलोकन

## सरिता आर्या

'संस्कार' शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से 'ध×ा्' प्रत्यय लगाने पर "संपरिभ्यां करौतौ भूषणे"– इस पाणिनीय सूत्र से भूषण अर्थ में 'सुट्' (स्) आगम करने पर सिद्ध होता है। इसका अर्थ है– 'संस्करण', 'परिष्करण', 'विमलीकरण' तथा विशुद्धिकरण आदि। 'संस्कार' शब्द प्राचीन वैदिक साहित्य में नहीं मिलता है।[1] जैमिनि के सूत्रों में 'संस्कार' शब्द अनेक बार आया है, और सभी स्थलों पर संस्कार शब्द यज्ञ के पवित्र या निर्मल कार्य के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[2] जैमिनि सूत्रों की व्याख्या में शबर ने 'संस्कार' शब्द का अर्थ बताते हुये कहा है कि 'संस्कारों नाम स भवति यस्मिन्जाते पदार्थो भवति योग्यः कस्यचिदर्थस्य' अर्थात् संस्कार वह है जिसके होने से कोई पदार्थ या व्यक्ति किसी कार्य के योग्य हो जाता है।[3] तन्त्रवार्तिक के अनुसार 'योग्यतां चादघानाः क्रियाः संस्कारा इत्युच्यन्ते," अर्थात् संस्कार वे क्रियाएं तथा रीतियां हैं जो योग्यता प्रदान करती है।[4]
संस्कार मानव की शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक उन्नति के लिये जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त विभिन्न अवस्थाओं के अनुकूल वेद के मनीषी एवं कर्मकाण्ड के मर्मज्ञ ऋषि मुनियों ने की बहुत ही सुन्दर ढंग से की ताकि मनुष्य उचित वेदोक्त पुण्य रूप कर्मों से विभिन्न संस्कार करें, जो इस जन्म वा परजन्म में पवित्र करने वाला हो।[5] इसके साथ–साथ बुरे संस्कारों का निवारण हो सके।

गार्भेर्होमैजति कर्म चौल मौ×जीनिबन्धनैः।
बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते।।[6]

अर्थात् गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, कर्णवेद्य उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन विवाह, वानप्रस्थ, सन्यास, अन्त्येष्टि आदि। यज्ञ से सम्पन्न किये जाने वाले संस्कारों से द्विज बालकों के बीज सम्बन्धी–परम्परागत पैतृक–मातृक अंशों से उत्पन्न होने वाले और गर्भकाल में माता–पिता से प्राप्त होने वाले बुरे आचरण के संस्कार जन्य दोष एवं शारीरिक अशुद्धियां दूर हो जाते हैं अर्थात् इन संस्कारों के करने से बालकों के बुरे संस्कार मिटकर शुद्ध–श्रेष्ठ संस्कार बनते हैं।[7] प्रथम संस्कार है।
गर्भाधान संस्कार
'गर्भस्याऽधानं वीर्यस्थापनं स्थिरीकरणं यस्मिन्येन वा कर्मणा तद् गर्भाधानम्' गर्भ का धारण, अर्थात् वीर्य का स्थापन गर्भाशय में स्थिर करना जिसमें होता है उसे गर्भाधान कहते हैं।[8]
गर्भाधान संस्कार का लक्ष्य बालक के जन्मजन्मान्तरों के जो संस्कार उसके साथ आये हैं उनका परिष्कार करना व शुभ संस्कारों को उन्नत करना है।[9] द्वितीय संस्कार है पुंसवन संस्कार 'पुरा स्पन्दत इति मासे द्वितीये तृतीये वा।"[10] जब भ्रूण हिलने डुलने लगे तब यह क्रिया दूसरे या तीसरे मास करनी चाहिये।[11] पुंसवन संस्कार का उद्देश्य गर्भ को वीर्यवान्, बाहरी कुचेष्टाओं से रक्षार्थ व बालक को दीर्घ आयु बनाना है।[12]
तृतीय संस्कार है सीमन्तोन्यन संस्कार। "सीमन्तस्य उन्नयनम् उद्भावनम् इति सीमन्तोन्नयन्।"[13] शिर में पांच सन्धियां हैं जिनको सीमन्त कहते हैं और इन सन्धियों की उन्नति व प्रकाश करने को सीमन्तोन्न कहते हैं। इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य मस्तिष्क व मानसिक शक्तियों की उन्नति करना है।[14]

चतुर्थ संस्कार है जातकर्म संस्कार।
प्राङ्नाभिवर्धनात्पुंसो जातकर्म विधीयते।
मन्त्रवत्प्राशनं चास्य हिरण्यमधुसर्पिषाम्।।[15]

अर्थात् बालक का जातकर्म संस्कार नाभि काटने से पहले किया जाता है और इस संस्कार में इस बालक को मन्त्रोच्चारण पूर्वक सुवर्ण, शहद और घी अर्थात् सोने की शलाका से शहद और घी चटाया जाता है। नामकरण संस्कार 'दशम्यामुत्थाय पिता नाम करोति'।[16] प्रसव दिन से प्रारम्भ करके दशवें

दिन, सूतिका को सूतिका गृह से उठवा कर ग्यारहें दिन बालक का पिता नामकरण संस्कार को करता है। समाज में रहते हुये कार्यो और व्यवहार के लिये नाम की आवश्यकता है इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये नामकरण संस्कार सम्पन्न किया जाता है।[17] निष्क्रमण संस्कार निष्क्रमण का अर्थ है बाहर निकलना अर्थात् बालक को घर से निकाल जहां की वायु शुद्ध हो वहां भ्रमण करवाना निष्क्रमण कहलाता है।

चतुर्थे मासि निष्क्रमणिका। सूर्य भुदीक्षयति तच्चक्षुरिति।[18]

जननाद्य स्तृतीयो ज्यौत्स्नस्तस्य तृतीयाम्।।[19]

इस संस्कार का उद्देश्य है बालक को शुद्ध वायु का सेवन कराना ताकि वो भावी रोगों से दूर हो जावें और शारीरिक उन्नति को प्राप्त हो व सृष्टि अवलोकन करने का प्रथम शिक्षण देना है।[20]

अन्नप्राशन संस्कार षष्ठेमासि अन्नप्राशनम्। दधिभधुघृतमिश्रितमन्नं प्राशचेत्।"[21] अर्थात् छठे मास में बालक को अन्नप्राशन करायें और दही, शहद, घी मिश्रित भोजन चटायें।

चूड़ाकर्म संस्कारः– "तृतीय वर्षे चौलम्।"[22] "सांवत्सरिकस्य चूडाकरणम्।"[23] तृतीय वर्ष में या एक वर्ष के बालक का मुण्डन किया जाता है। चूड़ाकर्म संस्कार का उद्देश्य सिर की त्वचा को रोगों से बचाना आदि है।[24]

उपनयन संस्कारः– कर्णवेद्यों वर्षे तृतीये पंचमे वा।[25] अर्थात् कर्णवेद्य तीसरे वा पांचवे वर्ष में करना। कर्णवेद्य संस्कार के उद्देश्य को सुश्रुत सूत्रस्थान अध्याय सोलह के आरम्भ में इस प्रकार है– "रक्षाभूषणं निमित्तं बालस्य कर्णो विध्येत्।" अर्थात् रोग से रक्षा के लिये और आभूषण पहनने के निमित्त बालक के दोनों कान बींधने चाहिये।

उपनयन संस्कारः– 'उपनयन' का अर्थ है "पास या सन्निकट ले जाना।" अर्थात् बालक को आचार्य के पास शिक्षा प्राप्ति के लिये ले जाना[26] आश्वलायनगृह्यसूत्र[27] के मत से ब्राह्मण कुमार का उपनयन गर्भाधान या जन्म से लेकर आठवें वर्ष में, क्षत्रिय का 11 वें वर्ष में एवं वैश्य का 12 वें वर्ष में होना चाहिये। उपनयन संस्कार का मुख्य उद्देश्य बालक को शिक्षित कर जीवन के लिये तैयार करने का प्रारम्भ है।

वेदारम्भ संस्कारः– वेदारम्भ उसको कहते हैं जिसमें गायत्री मन्त्र से लेकर सांगोपांग चारों वेदों के अध्ययन करने के लिये बालक नियम धारण करता है जो दिन उपनयन संस्कार का है वही वेदारम्भ का है। 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' वेद ही सम्पूर्ण जीवन निर्माण के तत्वों (धर्म) का मूल आधार है। उसी का ज्ञान प्रदान करना इस संस्कार का उद्देश्य है।

समावर्तन संस्कारः– वेद समाप्तिं वाचयति।[28] जब वेदों की समाप्ति हो तब समावर्तन संस्कार होता है। बालक ब्रह्मचर्य व्रत, सांगोपांग वेद विद्या, उत्तम शिक्षा और पदार्थ विज्ञान को पूर्ण रीति से प्राप्त होकर विवाह विधान पूर्वक गृहाश्रम को ग्रहण करने के लिये विद्यालय छोड़कर घर जाता है उसे समावर्तन संस्कार कहते हैं।

विवाह संस्कारः– विवाह के समय किया जाने वाला संस्कार विवाह संस्कार है ऋग्वेद के मतानुसार विवाह का उद्देश्य गृहस्थ होकर देवों के लिये यज्ञ करना तथा सन्तानोत्पति करना है।

वानप्रस्थ संस्कारः– गृहस्थ होकर फिर घर के सभी पदार्थों को छोड़कर पुत्रों में अपनी पत्नी को छोड़ अथवा संग लेकर वन जाकर आत्मा और परमात्मा के ज्ञान के लिये श्रुतियों आदि के अर्थों का विचार करने के लिये जो संस्कार किया जाता है उसे वानप्रस्थ संस्कार कहते हैं।[29] सार रूप में वानप्रस्थ संस्कार भोग से मोक्ष प्राप्ति के तरफ मानव का प्रयास है।

संन्यास संस्कार संन्यास संस्कार उसको कहते हैं कि जो मोहादि आवरण पक्षपात छोड़ के विरक्त होकर सब पृथिवी पर परोपकारार्थ विचरे'। 'काम्यानां कर्माणां न्यासः इति संन्यासः काम्य कर्मों का न्यास (परित्याग) ही सन्यास है।[30] संन्यास आश्रम का उद्देश्य अनन्त ब्रह्म को जानकर तप आदि द्वारा मोक्ष की प्राप्ति है।[31]

**अन्त्येष्टि संस्कारः–** श्रद्धा के साथ मृत शरीर का दाह कर्म करना अन्त्येष्टि संस्कार है। यजुवेद 39/3 में वर्णित किया है कि जो लोग सुगन्धियुक्त घृतादि सामग्री से भरे शरीर को विधिपूर्वक जलाते हैं, वे पुण्य सेवी होते हैं।

अन्त्येष्टि संस्कार का उद्देश्य मृत शरीर को सद्गति प्राप्त कराने के लिये ईश्वर युक्त करने व श्रेष्ठ गतियों को प्राप्त करवाना है।[32]

भारतीय मनीषियों ने मानव जीवन के सर्वोत्तम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति हेतु मनुष्य की औसत आयु को सौ वर्ष मानकर चार अवस्थाओं में उसका विभाजन किया–

चतुर्थमायुषो भागमुषि त्वाद्यं गुरौ द्विजः।

द्वितीयमायुषो भागं कृतदारो गृहे वसेत्।।[33]

इस विधान से स्पष्ट है कि इसमें 25 वर्ष की अवस्था ब्रह्मचर्य की है, जिसे जीवन की आधारशिला समझना चाहिये क्योंकि मूलतः शेष आश्रमों की आधारशिला इसी आश्रम की शक्तिसंचय, ज्ञानसंचय एवं गुणों के विकास पर टिकी है। ब्रह्मचर्य व्रत के समापन पर समावर्तन संस्कार के अवसर पर गुरु शिष्य को भावी जीवन के लक्ष्य को निर्देशित करते हुये उपदेश देता है 'सत्यं वद धर्मं चर... प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः[34] अर्थात् सत्य बोलो, धर्म का पालन करो– सन्तान की परम्परा को मत तोड़ो। इस प्रमाण से स्वतः स्पष्ट है कि ब्रह्मचर्य के बाद सृष्टि चक्र को नियमित एवं व्यवस्थित के लिये, शिष्य को योग्य सन्तान समाज को देने के लिये उपदेश है। सन्तानोत्पति गृहस्थाश्रम के प्रवेश के बाद सम्भव है व गृहस्थाश्रम का प्रवेश होता है विवाह के बाद।[35]

**विवाह–** 'वि' उपसर्गपूर्वक 'वह्' प्रापणे धातु से घ×् प्रत्यय के योग से विवाह शब्द निष्पन्न होता है। विवाह अर्थात् विशिष्ट ढंग से कन्या को ले जाना। विवाह–सम्बन्धी शब्द परिणय या परिणयन (अग्नि की प्रदक्षिणा करना) एवं पाणिग्रहण (कन्या का हाथ पकड़ना) विवाह सम्बन्धी शब्द है यद्यपि ये शब्द विवाह संस्कार का केवल एक–एक तत्व बताते हैं।[36] संस्कार शब्द पहले स्पष्ट किया जा चुका है विवाह संस्कार अर्थात् वर व वधू के शरीर व आत्मा को सुविचारों से अलंकृत कर इस योग्य बनाना कि वो गृहस्थाश्रम का निर्वहण कर सकें। आज विवाह संस्कार एक संस्कार न रहकर परम्परा का निर्वहण मात्र रह गया है। इस संस्कार की मर्यादा आज छिन्न–भिन्न हो गयी है परिणामतः गृहस्थ जीवन में स्वर्ग जैसा सुख अब दिखाई नहीं पड़ता।

गृह्यसूत्रों, धर्मसूत्रों एवं स्मृतियों के काल से ही विवाह आठ प्रकार के कहे गये हैं– ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथाऽसुरः।

गान्धर्वोराक्षश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः।। मनुस्मृति 3/21

अर्थात् ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गन्धर्व, राक्षस, पैशाच ये विवाह आठ प्रकार के होते हैं।

**दैवविवाहः–** आच्छाद्य चार्यचित्वा च श्रुतिशीलवतेस्वयम्।

आहूय दानं कन्याया ब्राह्मों धर्मः प्रकीर्तितः।।[37]

अर्थात् कन्या के योग्य सुशील, विद्वान पुरूष का सत्कार करके कन्या को वस्त्रादि अलंकृत करके उत्तम पुरुष को बुला उसको कन्या देना ब्रह्म विवाह कहलाता है।

**दैवविवाहः–** यज्ञे तु वितते सम्यागृत्विजे कर्म कुर्वते।

अलंकृत्य सुतादानं दैवं धर्मं प्रचक्षते।।

अर्थात् विस्तृत यज्ञ में वस्त्र, आभूषण आदि से कन्या को सुशोभित करके देना, दैव विवाह कहा जाता है।

**आर्षविवाहः–**

एकं गोमिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मत्ः।

कन्या प्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते।।[38]

अर्थात् आर्षविवाह में वर से धर्मानुसार एक गाय बैल का जोड़ा अथवा दो जोडे लेकर विधि अनुसार यज्ञादि पूर्वक कन्या का दान करना है।

**प्राजापत्य विवाहः–**
सहोभौ चरतां धर्ममिति वाचाऽनुभाष्य च।
कन्या प्रदानमभ्यर्च्य प्राजापत्यो विधिः स्मृतः।।[39]
अर्थात् कन्या और वर को, यज्ञशाला में विधि करके सबके सामने 'तुम दोनों मिल के गृहाश्रम के कर्मों को यथावत् करो' ऐसा कहकर दोनों का प्रसन्नापूर्वक पाणिग्रहण होना, प्राजापत्य विवाह कहलाता है।

**आसुर विवाहः–** ज्ञातिभ्यो द्रविणं दत्त्वा कन्यायै चैव शक्तितः।
कन्याप्रदानं स्वाच्छन्द्यादासुरो धर्म उच्यते।।[40]
अर्थात् वर की जाति वालो और कन्या को यथाशक्ति धन दे कर होम आदि विधि कर कन्या देना आसुर विवाह कहलाता है।

**गान्धर्व विवाहः**
इच्छयाऽन्योन्यसंयोगः कन्यायाश्च वरस्य च
गान्धर्वः स तु विज्ञेयो मैथुन्यः कामसम्भवः।।[41]
वर और कन्या की इच्छा से दोनों का संयोग होना और अपने मन में यह मान लेना कि हम दोनों स्त्री–पुरूष है, गान्धर्व विवाह कहलाता है।[42]

**राक्षस विवाहः–**
हत्वा छित्त्वा च भित्त्वा च क्रोशन्तीं रूदतीं गृहात्।
प्रसह्य कन्याहरणं राक्षसो विधिरुच्यते।।[43]
हनन छेदन अर्थात् कन्या को रोकने वालों का विदारण कर क्रोशती, रोती, कांपती और भयभीत हुई कन्या का बलात्कार हरण करके विवाह करना राक्षस विवाह कहलाता है।

**पैशाच विवाहः–** सुप्तां मत्तां प्रभत्तां वा रहो यत्रोपगच्छति।
स पापिष्ठो विवाहानां पैशा चश्चाष्टमोऽधमः।।[44]
अर्थात् जो सोती, पागल हुई वा नशा पीकर उन्मत्त हुई कन्या को एकान्त पाकर दूषित कर देना, 'पैशाच विवाह' है।
इस लोक या व्यवहार में मनु चारों वर्णों के लिये ब्रह्म, दैव आर्ष तथा प्राजापत्य विवाहों को धर्मानुकूल मानते हैं।[45] शेष चारों–आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच को निन्दित? अहितकारी,[46] और अधर्मानुकूल मानते हुए उन्हें दुर्विविवाह की संज्ञा से अभिहित करते हैं।
वर्तमान में ।ततंदहम उंततपंहम भी वर–वधू व माता–पिता की अनुमति व दानादि द्वारा संस्कार रूप में की जाती है जो कि प्रथम चार प्रकार के विवाहों की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। असुर विवाह का प्रचलन भी भारत के कई राज्यों में आज भी प्रचलित हैं जहां वधू पक्ष को धन देकर विवाह किये जाते हैं। गान्धर्व विवाह वर्तमान में अधिक प्रचलित है। राक्षस व पैशाच विवाह को आधुनिक युग में बलात्कार की संज्ञा दी जाती है व अदालत द्वारा इसके लिये कठोर दण्ड के प्रावधान हैं।
वर्तमान में भी प्रथम चार विवाह के साथ–साथ आसुर व गान्धर्व विवाह अधिक संख्या में देखने को मिलते हैं।

**विवाह के धार्मिक कृत्यः–** ऋग्वेद के (10/85) इस सूक्त में सविता की पुत्री सूर्या तथा सोम के विवाह के विषय में बताया गया है जो विवाह के विशिष्ट कृत्यों का निर्देश करता है दोनों आश्विनौ सोम के लिये सूर्य मांगने जाते हैं।[47] सविता लड़की देने को तैयार हो गयी। वर का सम्मान किया गया, उसे भेटे दी गयी, सोम ने सूर्या का पाणिग्रहण किया और यह मन्त्र कहा– मैं तुम्हारा हाथ प्रेम के लिये ग्रहण करता हूं जिससे कि तुम मेरे साथ वृद्धावस्था को प्राप्त हो वो, तुम गृहिणी बनो। कन्या अपने पिता व देवों और अग्नि के समक्ष दान है।[48] कन्या अपने पिता के अधिकार एवं नियन्त्रण से हटकर अपने पति से मिल जाती है और उसे विभिन्न प्रकार के आशीर्वाद बड़ों द्वारा दिये जाते हैं।[49]
इस वर्णित विवाह व ऋग्वेद के 10 वें मण्डल में[50] वर्णित विवाह संस्कार के तीन भाग हैं। कुछ कृत्य आरम्भिक कहे जा सकते हैं, उनके उपरान्त कुछ ऐसे कृत्य है जिन्हें हम संस्कार का सार–तत्व कह सकते हैं, यथा पाणिग्रहण, होम, अग्नि, प्रदक्षिणा एवं सप्त पदी, तथा कुछ ऐसे कृत्य हैं जो उक्त मुख्य कृत्यों के प्रतिफल मात्र हैं यथा ध्रुवतारा, अरून्धती आदि का दर्शन।
विवाह संस्कार में निम्नलिखित बातें प्रचलित हैं

**वर–वधू–गुण परीक्षाः–** (क) वर–वधु की आयु– "ब्रह्मचयैण कन्या युवानं विन्दते पतिम्"[51] अर्थात् जैसे लड़के पूर्ण ब्रह्मचर्य और पूर्ण विद्या पढ़ पूर्ण जवान होकर अपने सदृश कन्या से विवाह करें, वैसे कन्या भी अखण्ड ब्रह्मचर्य से पूर्ण विद्या पढ़ युवति हो, अपने तुल्य पूर्ण युवावस्था वाले पति को प्राप्त होवे।"[52]
आयुर्वेद[53] के अनुसार "चतस्त्रो अवस्थाः शरीरस्य वृद्धिः, यौवनम्, संपूर्णत। किंचित् परिहाणिः चेति। आषोडशात् वृद्धिः, आप×चविंशतेः यौवनम् अर्थात् शरीर की चार अवस्थायें हैं, सोलहवें वर्ष से चौबीस तक वृद्धि बढ़ोतरी की अवस्था व पच्चीसवें वर्ष से यौवन का प्रारम्भ होता है वह युवावस्था ही विवाह की अवस्था है।

(ख) **गुणः–** भारद्वाज गृह्यसूत्र[54] अनुसार कन्या से विवाह करते समय चार बातें देखनी चाहिये यथा धन, सौन्दर्य, बुद्धि एवं कुल परन्तु चारों एकत्रित रूप में ना मिलें तो बुद्धि और कुल को ही महत्व दिया जाना चाहिये।
वर्तमान में इसे वर व वधू दोनों के लिये आवश्यक समझकर विवाह करना चाहिये।

(ग) **शारीरिक गुण अवगुणः–** मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, कात्यायन के अनुसार पागलपन, अपराध, कुष्ठता, नपुंसकता, अन्धापन, बहरापन, अपस्मार व तपेदिक जैसी बीमारियों को बढ़ने से रोकने के लिये वर–वधू में इन बीमारियों के होने पर विवाह न करने की बात कही है। बाल्यावस्था में विवाह का निषेध किया गया है।

1. वर्तमान में एड्स, रक्तकैंसर, रक्तचाप, अवसाद, मधुमेह आदि बीमारियों का अगर समय पर इलाज न करवाया जाये व गर्भावस्था के दौरान सावधानियां न बरती जाये तो ये आनुवांशिक रोग के रूप में सामने आती हैं।
2. वाग्दान या वाङ्निश्चय (विवाह तय करना) इसका उल्लेख शांखायायन गृह्यसूत्र[55] में पाया जाता है। वर्तमान में भी यह प्रचलित है।
3. मण्डप–करण (विवाह के लिये पण्डाल बनाना)– पारस्कर गृह्यसूत्र के मत से विवाह, चूड़ा करण, उपनयन, केशान्त एवं सीमन्त घर के बाहर मण्ड़प में करने चाहिये।
4. वधूगृहगमन– वर का बरात के रूप में वधू के घर जाना।[56]
5. मधुपर्क[57] (वधू के घर में वर का स्वागत) आपस्तम्ब, बौधायन, मानवगृ. एवं काठक गृ. में इसका वर्णन मिलता है।
6. स्नापन, परिधापन एवं सन्नहन अर्थात् वधू को स्नान कराना, नया वस्त्र देना, उसकी कटि में धागा या कुश की रस्सी बांधना।[58]
7. सम×जन अर्थात् वर एवं वधू को उबटन या सुगन्ध लगाना।[59]
8. प्रतिसरबन्ध अर्थात् (वधू के हाथ में कंगन बांधना)[60]
9. वधूवर–निष्क्रमण अर्थात् घर के अन्तः कक्ष से वर एवं मधु का मण्डप में आना।
10. परस्पर समीक्षणः– एक–दूसरे की ओर देखना। सर्वप्रथम वर एवं वधू के बीच में एक वस्त्र–खण्ड रखा जाना चाहिये और ज्योतिष के अनुसार हटा लिया जाना चाहिये तब वर एवं वधू एक–दूसरे को देखते हैं।[61]
11. कन्यादानः– इसी कृत्य में पिता वर से कहता है कि वह धर्म, अर्थ व काम में कन्या के प्रति झूठा न हो और वर उत्तर देता है कि मैं ऐसा ही करूंगा। इसमें वर को कन्या दी जाती है।[62]

**अग्निस्थापन एवं होमः–** अग्नि की स्थापना करना एवं अग्नि में आज्य की आहुतियां डालना।[63]
पाणिग्रहण– कन्या का हाथ पकड़ना।
लाजहोम[64] – कन्या द्वारा अग्नि में धान की खीलों की आहुति देना।
अग्निपरिणयन[65] –वर–वधू को लेकर अग्नि एवं कलश की प्रदक्षिणा करता है। प्रदक्षिणा करते समय वह 'अमोऽहमस्मि' आदि का उच्चारण करता है।

**अश्मारोहणः**–[66] वधू को पत्थर पर चढाना।
सप्तपदीः–[67] वर एवं वधू का साथ–साथ सात पग चलना।
मूर्धाभिषेकः–[68] वर वधू के सिर पर कुछ लोगों के मत से केवल वधू के सिर पर ही जल छिड़कना।

**सूर्यौदीक्षणः–**[69] वधू को सूर्य की ओर देखने का कहना।
हृदय स्पर्श–[70] मन्त्र के साथ वधू के हृदय का स्पर्श

**प्रेक्षकानुमन्त्रणः–**[71] नवविवाहित दम्पति की ओर संकेत करके दर्शकों को सम्बोधित करना।
दक्षिणादान–[72] आचार्य को गाय भेंट स्वरूप देना।
गृहप्रवेश–[73] वर के घर में प्रवेश और गृह प्रवेशनीय होम
ध्रुवारुन्धती–दर्शन[74] विवाह के दिन वधू को ध्रुव एवं अरुन्धती तारे की ओर देखने को कहना।
वर्तमान में महर्षि दयानन्द ने विवाह संस्कार में वधू वर स्नानविधि, मधुपर्क विधि, गोदान विधि कन्यादान, वस्त्र आदान–प्रदान, यज्ञ कार्य विधि, पाणिग्रह्ण विधि, शिलारोहण व लाजा होम, सप्तपदी, सूर्य, ध्रूव, अरुन्धती दर्शन आदि विधि का वर्णन किया है।

**विवाह संस्कार की आवश्यकताः–** आज विवाह संस्कार एक संस्कार न रहकर परम्परा का निर्वहण मात्र रह गया है। संस्कार को सही रूप में सम्पन्न कराने की आज क्या चिन्ता है। केवल चिन्ता हैं तो बाजों, नाच गानों, दावतों शराब व शोर शराबें व दहेज के रूप में मिलने वाले सामान की।
विवाह संस्कार एक परम पावन संस्कार है। इसमें दो दूरस्थ हृदय परस्पर एक होते हैं। एक दो वर्ष के लिये ही नहीं, सम्पूर्ण जीवन के लिये किन्तु ज्ञान के अभाव में व सांस्कृतिक प्रदूषण के कारण विवाह संस्कार की मर्यादा छिन्न–भिन्न हो गयी है अतः विभिन्न कारणों से विवाह संस्कार वैदिक रीति से किया जाना चाहिये–

**विवाह का मूल उद्देश्यः–**
वर्तमान में विवाह का उद्देश्य केवल भोग के लिये पुरूष व स्त्री का संयोग होना समझ लिया गया है। जबकि विवाह ज्ञान, विज्ञान, धर्म व संस्कार का मिश्रण है जिससे स्त्री पूर्ण स्त्रीत्त्व पुरूष पूर्ण पुरूषत्त्व को प्राप्त होता है। विवाह का मूल उद्देश्य सामाजिक दायरे का विकास कर अर्थात् सन्तानोंत्पति आदि द्वारा पूर्ण शारीरिक सन्तुष्टि के बाद मोक्ष प्राप्ति का मार्ग है। केवल कामेच्छा इसका प्रयोजन नहीं। लाजाहोम[75] की चार परिक्रमाओं में इसी उद्देश्य को स्पष्ट किया गया है महर्षि दयानन्द अनुसार इसमें प्रथम परिक्रमा धर्म, द्वितीय अर्थ, तृतीय काम व चतुर्थ मोक्ष के लिये हैं।
**विवाह की सुदृढ़ता के लियेः–** 'न स्तेयमधि'[76] अर्थात् आपस में कोई चोरी का व्यवहार नहीं करेंगे वर और वधू द्वारा विवाह संस्कार के समय की जाने वाली प्रतिज्ञा है क्योंकि गृहस्थ में चोरी से एक–दूसरे से बातें छिपाई जायेंगी तो सशंय होगा और जहां रिश्तों में सन्देह उत्पन्न होता है वहां परिवार विनाश को प्राप्त हो जाते हैं। सप्तपदी के अवसर पर 'मा सत्येन दक्षिणमतिक्राम'[77] अर्थात् उल्टे मार्ग पर नहीं सीधे मार्ग पर चलना क्योंकि यही सद्गृहस्थ की उत्तमता के लिये आवश्यक है।

**परिवार में एकसूत्रता के लियेः–** ओऽम् सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्रुवां भव। ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधि देवृषु स्वाहा।[78]
अर्थात् तू अपने श्वसुर, सासु, ननन्द और देवरों के साथ सम्राज्ञी होकर रहे अर्थात् ऐसा बर्ताव कर कि जिससे कभी कोई विरोधी न हो। सप्तपदी में परिवार की सुदृढ़ता के लिये धन, ज्ञान, बल, अन्न, आनन्द उत्तम सन्तान की।[79] आवश्यकता बताई गयी जिनसे परिवार सुदृढ़ होकर एकसूत्र रहेगा।

ओम सम×जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ। ऋ.मं. सू. 85। म. 47

अर्थात् हम दोनों के हृदय जल के समान मिल जावें, हम परस्पर प्राणवायु के समान एक–दूसरे से प्रेम करें। एक–दूसरे को सभी के कल्याण के लिये धारण करें तथा परंस्पर एक–दूसरे के हित की कामना करते हुये स्नेह करें। विधाता हमें ऐसा सामर्थ्य प्रदान करें। हम जानते हैं कि जब दो स्थानों के जलों को एक कर दिया जाये तो दोनों जलों को कभी भी पृथक नहीं किया जा सकता और ऐसा ही वायु के साथ है तो जो ऐसी भावना के साथ विवाह बन्धन में बन्धेगे तो 'तलाक' शब्द हमारी संस्कृति में जड़े नहीं जमा पायेगा।

**पारस्परिक स्वीकृतिः–** ओम् अहं विष्यामि यमि रूपमस्या वेवदितत्पश्यन्मनसः कुलायम्।
न स्तेयमद्यि मनसोदमुच्चे स्वयं श्रध्नानो वरूणस्य पाशान्।[80] अर्थात् हम परिवार वालों या अन्य किसी के द्वारा बलात् विवाह के एक सूत्र में बन्धने के लिये नहीं आये हैं अपितु एक–दूसरे के विषय में पूर्ण जानकारी प्राप्त करके स्वेच्छा से विवाह के एक सूत्र में बन्धने के लिये उपस्थित हुये हैं। पाणिग्रहण हस्त बन्धन के द्वारा पारस्परिक एक सूत्र में जीवनपर्यन्त निर्वाह करने की पारस्परिक स्वीकृति है।[82]

**पर्यावरण शिक्षाः–** सप्तपदी में छठा पग धरने पर 'ऋतुभ्यः षट्पदी भवः' कहकर ऋतुओं की अनुकूलता के लिये ईश्वर से प्रार्थना की गयी और ऋतुएं तभी अनुकूल होगीं अगर हम पर्यावरण को शुद्ध रखेंगे। 'मधुवाता.' आदि मन्त्रों द्वारा वर की प्रभु से प्रार्थना है कि प्रकृति की सभी ऋतुएं, वायु, जलाशय, औषोधियां, रात्रि और उषाकाल, पृथिवी का प्रत्येक कण, आकाश, वनस्पतियां सूर्य तथा पशु माधुर्ययुक्त हो, जीवन में मधुरता का संचार इनसे हो जिससे हमारा जीवन मात्र नहीं अपितु प्रकृति का सारा वातावरण माधुर्ययुक्त हो।[82]

**गृहस्थ जीवन की स्थिरता के लियेः–** वर–वधू द्वारा सूर्य,[83] ध्रूव[84] एवम् अरुन्धती दर्शन[85] करने का विधान है। सूर्य दर्शन करते हुये शतायु को देखने, सुनने की कामना की जाती है। सूर्य के समान तेजस्विता, गतिशीलता आदि भाव जीवन में प्राप्त हो इसके लिये सूर्य दर्शन का विधान है। वधू को ध्रूव दर्शन इस अभिप्राय से कराया जाता है कि गृहस्थ जीवन में अनेक विघ्न बाधाएं आती रहती हैं तो ध्रूव तारे के समान अडिग रहना अरून्धती दर्शन का अभिप्राय है अरून्धती व वसिष्ठ के समान जीवनपर्यन्त साथ रहना। शिलारोहण के अन्तर्गत

ओम् आरोहेमंमश्मानश्मेव त्वं स्थिरा भव[86]

अर्थात् हे वधू! तुम शिला पर पैर रखो, शिला के समान धर्म के कार्य में स्थिर रहो, जो विध्न, बाधाएं अन्यों द्वारा प्राप्त हों, उसे तुम दबा देना यहां गृहस्थ आश्रम में आने वाली बाधाओं में स्थिर मति होने के लिये कहा गया है जो गृहस्थ जीवन की स्थिरता के लिये आवश्यक है।

**समाज की सुदृढ़ता के लियेः–** आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2/5/12/4 में एक सामान्य वचन लिखा है कि जैसा विवाह होगा उसी प्रकार की सन्तानें होगीं अर्थात् यदि विवाह अत्युत्तम ढंग से होगा तो सन्तान

भी सच्चरित्र होगी और अगर सन्तति अत्युत्तम होगी तो समाज व राष्ट्र की उन्नति अवश्य ही होगी सप्तपदी के प×चपद में 'प्रजाभ्यः प×चपदी भव'[87] की भावना भी सामाजिकता की भावना को गौरव प्रदान करती है क्योंकि प्रजाभ्यः का तात्पर्य सन्तान के साथ–साथ अपने आस–पास रहने वालों के कल्याण के लिये भी कामना करना है ऐसे सुविचार समाज को एकता के सूत्र में बांधने का कार्य करेंगे।

**कामशास्त्र व गर्भाधान ज्ञान के लियेः–** ओउम् काम वेद ते...[88] इत्यादि तीन मन्त्र दर्शा रहे कि पूर्ण यौवनावस्था में विवाह करना चाहिये जब कि पुरूष–स्त्री के शरीर में कामदेव पूर्णरूप से प्राप्त हो चुका हो और वह स्वभाव से एक–दूसरे की आवश्यकता अनुभव कर रहे हों। कामचेष्टा सन्तानोत्पति का साधन हैं इसलिये विवाह से पूर्व यह ज्ञान आवश्यक है।

इन तीन मन्त्रों से यह बात स्पष्ट है कि पुरूष व नारी का समागम प्राकृतिक है, सन्तानोत्पति के योग्य है व शारीरिक सन्तुष्टि प्रदान करता है परन्तु वर्तमान में समलैगिकता को कानूनी रूप से स्वीकार करके प्राकृतिक पर्यावरण को प्रदूषित किया जा रहा है व जनसंख्या की रोकथाम के उपाय के रूप में इसका प्रचार किया जा रहा है। पुरूष व स्त्री की असमान शारीरिक संरचना पारस्परिक आकर्षण को बनाये रखती है जो विवाह सुदृढ़ीकरण का आधार है।

**वर्तमान में उपादेयताः–**

वैदिक विवाह एक पवित्र बन्धन है जहां दो हृदय एक हो जाते हैं, दोनों एक–दूसरे को समर्पित, दोनों की एक–दूसरे में आस्था, दोनों एक दूसरे में आकण्ठ निमग्न, दोनों के जीवन का एक लक्ष्य, उद्देश्य और वह है पवित्र स्नेह के बन्धन में स्वयं बन्धना, परिवार को बाधंना एवं समाज को देश के स्वच्छ परम्परा के निर्वाहार्थ योग्य सन्तान देना।

विवाह संस्कार एक पावन संस्कार है। इसमें दो दूरस्थ हृदय परस्पर एक होते हैं किन्तु इस संस्कार की मर्यादा समाप्त हो गयी है व तलाक (विवाह विच्छेद) समाज में बढ़ते जा रहे हैं। विवाह संस्कार ठीक न होने के कारण ही आज परिवार टूट रहे हैं। संस्कारों के अभाव में पिता–पुत्र, पति–पत्नी, भाई–बहन आदि के पवित्र सम्बन्धों में दरारें पड़ गई हैं। यह सब संस्कार हीनता एवं भौतिक प्रियता, भोगवाद की प्रधानता के कारण है।

आज गृहस्थ आश्रम में न तो आनन्द का वास है ना प्रिय भाषिणी स्त्री व मधुरभाषी पति, न आज्ञाकारी व बुद्धिमान पुत्र है न अतिथि और साधुसेवा का स्वभाव है न ईश्वर भक्ति, न योग्य अन्न हैं न धन तो गृहस्थ आश्रम रूपी स्वर्ग कैसे प्राप्त होगा। इसका एकमात्र कारण है वैदिक विवाह की मर्यादा को न समझना, विवाह संस्कार को संस्कार रूप में सम्पन्न न कराना है जब विवाह संस्कार का उद्देश्य ही न सुना जायेगा, इस संस्कार के महत्व को नहीं समझा जायेगा, इस संस्कार की पावन गरिमा के पालनार्थ व्रत नहीं लिया जायेगा, जीवन को संयमित एवं मर्यादित नहीं बनाया जायेगा एवं पारस्परिक स्नेह सूत्र के बन्धन को परिपक्व नहीं किया जायेगा तो भारत की अदालतें भी तलाक मुकद्दमों से भर जायेंगी और विदेशी लोग जिस भारतीय विवाह मर्यादा की प्रशंसा करते हैं वो मर्यादा विलासिता, आमोद–प्रमोद व विषय–वासना पूर्ति का माध्यम बन कर अपने वास्तविक उद्देश्य को भूल जायेगा।

**संदर्भ सूची**


1 धर्मशास्त्र का इतिहास, अध्याय 6
2 जैमिनी सूत्र– 3/1/3, 3/2/15, 3/8/15, 3/8/3, 9/2/9, 9/3/25 आदि।
3 जैमिनी सूत्र– 3/1/3 शबर व्याख्या
4 गौतम धर्मसूत्र 8/8, आपस्तम्बधर्मसूत्र 1/1/1/9, वसिष्ठधर्मसूत्र 4/1,
5 वैदिकेः कर्माभिः ..... प्रेत्य चेह च। मनुस्मृति 2/26.
6 मनुस्मति 2/27
7 मनुस्मृति, द्वितीय अध्याय, 27
8 संस्कार चन्द्रिका, गर्भाधान संस्कार प्रमाण भाग
9 पारस्कर गृह्य सूत्र, 1 काण्ड, 1 कण्डिका, 1
10 पारस्कर गृह्य सूत्र, 1 काण्ड 2 कण्डिका, 14
11 धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. 188 अनवलोभन व गर्भरक्षण के अर्न्तगत
12 संस्कार चन्द्रिका, सीमन्तोन्नयन संस्कार, पृ. 252
13 सुश्रुत शरीर स्थान अ. 6– प×च सन्धयः शिरसि विभक्ता 8 सीमन्ताः
14 मनुस्मृति 2/29
15 पारस्कर गृहम सूत्र का. 1, क. 17 सू. 1
16 सत्यार्थ प्रकाश
17 पारस्कर गृह्य सूत्र का. 1 क. 17 सू. 5–6
18 गोभिल. गृह्य सूत्र प्र. 2 कां. 8. सू. 1
19 सत्यार्थ प्रकाश व संस्कार चन्द्रिका नामकरण संस्कार व्याख्या भाग
20 आश्वलायन गृह्यसूत्र 1/16/1–5
21 आश्वलायन गृह्यसूत्र 1/17/1
22 पारस्कर गृह्यसूत्र 1/17/1
23 संस्कार चन्द्रिका चूड़ाकर्म संस्कार व्याख्या भाग
24 पारस्कर परिशिष्ट का त्यायन गृ.सूत्र कर्णवेधसूत्र 1, 2
25 धर्मशास्त्र का इतिहास, अध्याय 7, पृ. 208
26 आश्वलायन गृह्यसूत्र 1/19/1–6
27 आश्वलायन गृह्यसूत्र अ. 1/क. 22/सू. 16
28 मनुस्मृति अ. 1–7
29 संस्कार भास्कर, पृ. सं. 117
30 तैतिरीय प्रपाठक 101 अनुवाक 63 न्यास इत्याहुर्मनोषिणो ..... महिमानमित्युपनिषत
31 ओउम् इमौ युनज्मि ते वन्ही असुनीताय वोढवे। ताभ्यां यमस्य सादनं समिती–श्चाव गच्छतात् स्वाहा। अथर्व कां. 18/सू. 2 मं 56/
32 मनुस्मृति 4/1/15/ 169
33 तैतिरीय उपनिषद् के शिक्षा वल्ली प्रथम अध्याय, 11 अनुवाक
34 शतपथ ब्राह्मण 5/2/ 10
35 धर्मशास्त्र का इतिहास, अध्याय 9, विवाह
36 मनुस्मृति तृतीय अध्याय, 27
37 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 29
38 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 30
39 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 31
40 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 32
41 संस्कार विधि 100
42 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 33
43 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 34
44 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 20
45 मनुस्मृति, तृतीय अध्याय, 20
46 ऋग्वेद 10/8–9
47 ऋग्वेद, 10/40–41
48 धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. 301
49 ऋग्वेद, 10 /85/ 14– 26, 33, 37, 43, 46, 47 आदि।
50 अथर्ववेद 11/5/5
51 संस्कार वि. वेदारम्भप्रकरण
52 सुश्रुत सूत्रस्थान 35/25
53 भारद्वाज गृह्यसूत्र 1 /11
54 शांरवायन गृह्य सूत्र (1/6/5–6)
55 आपस्तम्ब गृह्यसूत्र 1/12/1
56 आपस्तम्ब गृह्यसूत्र 3/8, बौद्यायन 1/2/1, मानवगृह्यसूत्र 1/9
57 आपस्तम्ब गृह्यसूत्र 4/8, काठक 25/4, पारस्कर (1/4), गोभिल, 2/1/17/18)

58 खांखायन गृह्यसूत्र 1/12/5, काठक 25/4, पारस्कर (1/4), गोभिल, 2/2/25
59 खांखायन गृह्यसूत्र 1/12/6–8, कौशिक सूत्र 76–8
60 पारस्कर गृह्यसूत्र 1/4, आपस्तम्ब 04/4, बौद्यायन 1/1/24–25, ऋग्वेद– 10–85/ 44–40, एवं 37
61 पारस्कर गृह्यसूत्र 1/4, वाराह. 13
62 आश्वलायन 1/7/3 एवं 1/4/3–7, आपस्तम्ब. 5/1, गोभिल 2/1/24–26. मानव. 1/8, भारद्वाज 1/13 आदि।
63 आश्वलायन 1/7/7–13, पारस्कर, 1/6, आपस्तम्ब. (5/3–5) शांखायन 1/13/15–17
64 शांखायन 11/13/4 हिरण्यकेशि. 1/20/ 81 आदि
65 धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. 304
66 धर्मशास्त्र का इतिहास, पृ. 304
67 आश्वलायन 7/7/20, पारस्कर 1/8
68 पारस्कर 1/8
69 पारस्कर 1/8, भारद्वाज 1/17, बौद्यायन 1/4/1
70 ऋग्वेद 10/85/33
71 पारस्कर 1/8, शांखायन 1/14/13–17, गोभिल 2/3/33, बौधायन, 1/4/38
72 आपस्तम्ब 6/5–10, शांखायन 1/16/ 1–12, गोभिल 2/3/8–12
73 आपस्तम्ब 6/5–10, शांखायन 1/17/2
74 विवाह संस्कार
75 नस्तेयमदिम मनसोदमुच्ये स्वयं श्रन्थानो वरूणस्य पाशान्।।–अथर्व. का 14/अ./म. 56/ मैं मन से भी तुझ वधू के साथ चोरी को छोड़ देता हूं और किसी उत्तम पदार्थ का चोरी से भोग नहीं करता हूं। पुरूषार्थ से शिथिल होकर भी उत्कृष्ठ व्यवहार से दुर्व्यसनी पुरूष के बन्धनों को दूर करता हूं।
76 गोभिल गृ.सू.प्र. 2/सू. 13
77 ऋ म.10, सू 85/ म. 46
78 विवाह संस्कार, सप्तपदी, पृ. सं. 36
79 अथर्ववेद का. /4/अ. 1/ मं 56
80 पारस्कर का. 1/क. 8
81 मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नस्सन्त्वोषधीः।–यजु. अ., 13/मं 27
82 गोभि.गृ. सू. प्र 2/का. 3/सू. ।।
83 गोभि.गृ. सू. प्र 2/का. 3/सू.10, 1।
84 पार.का. 1/ क. 8
85 पार.का. 1/ क. 8
86 पार.का. 1/ क. 8
87 सामवेद मं ब्रा. प्र. स्वं 1! म. 1, 2, 3